International Research Journal of Human Resources and Social Sciences
Vol. 3, Issue 11, NOVEMBER 2016 Impact Factor- 3.866
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
© Associated Asia Research Foundation (AARF) Publication
Website: www.aarf.asia Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

नाथ सम्प्रदाय में गुरु की उपादेयता

डॉ0 बी0 बी0 त्रिपाठी
शोध निर्देशक
राजकीय महिला महाविद्यालय, झाँसी

नेहा मिश्रा
शोध छात्रा
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

महायोगी गोरखनाथ साक्षात 'शिव' है, उन्होनें अपने नाथ स्वरूप से महायोग ज्ञान का प्रकाशन किया। महायोगी गुरु गोरखनाथ द्वारा प्रतिष्ठापित नाथ सम्प्रदाय में गुरु को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है क्योंकि नाथ सम्प्रदाय में सम्पूर्ण योग साधना गुरु के ही मार्ग दर्शन में चलती है। गुरु गोरखनाथ ने योगेश्वर मत्स्येन्द्र नाथ से गुरु दीक्षा ली। उनका कथन है कि जिन्होनें गुरु की कृपा से प्राण वायु का साधन किया और वायु के द्वारा चित्त को वश में किया है। वही योगी जितेन्द्रिय और सुखी भी है परन्तु कुतर्क करने वाले मूर्ख यह मार्ग नहीं जान पाते है।

गुरुप्रसादान्मरुदेव साधित
स्तेनैव चित्तं पवनेन साधितम्।
स एव योगो स जितेन्द्रियः सुखी
मूढ़ा न जानन्ति कुतर्कवादिनः।।[1]

गुरु शिष्य के अज्ञान अन्धकार को नष्ट कर उसे कल्याण के मार्ग पर प्रशस्त करता है। चैतन्य स्वरुप में अवस्थित होने, परमपद में स्थित होने का सदुपदेश देता है। इस तरह शिष्य चैतन्य स्वरूप में विश्रान्ति के फलस्वरूप परमपद प्रस्फुटित कर गुरु के अनुग्रह से अनन्त परमशिव का साक्षात्कार करता है।

गुरुरिति गृणाति शं सम्यक् चैतन्यविश्रान्तिमुपदिशति विश्रान्त्या स्वयमेव।
परात्परं परमपदमेव प्रस्फुटं भवति तत्क्षणत साक्षात्कारो भवति।[2]

नाथ सम्प्रदाय में योग साधना के लिए सर्वप्रथम शिष्य को श्रेष्ठ्य गुरु से दीक्षित होना परमावश्यक है और गुरु की कृपा प्राप्त कर लेना तथा गुरु के द्वारा कान में मंत्र फूंक दिया जाना ही दीक्षा है। नाथयोग परम्परा में योग के कठिन व्यापारों को निर्विघ्न सम्पादित करना गुरु के अभाव में कदापि संभव नहीं। गुरु बनाने की इसी परम्परा को 'गुरुवाद' से भी सम्बोधित किया जाता है। गुरु गोरखनाथ ने गुरु की वन्दना करते हुये स्वयं कहा है– ''मैं अपने गुरु मत्स्येन्द्रनाथ की वन्दना

करता हूँ जो साक्षात परमानन्द स्वरूप, सच्चिदानन्दस्वरूप, आनन्दविग्रह अथवा मूर्तिवान आनन्द है, जिनके सान्निध्य मात्र से ही यह शरीर चिदानन्द, चिन्मय और परमानन्द हो जाता है।

श्री गुरु परमानन्दं वन्दे स्वानन्दविग्रहम्।
यस्य सानिन्ध्यमात्रेण चिदानन्दायते तनुः।।[3]

महायोगी गोरखनाथ ने अमनस्क योग में भी कहा है कि गुरुदेव से बढ़कर अन्य कोई नहीं है, गुरु ही त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु देवादिदेव महादेव) है इसीलिए सदा गुरु की पूजा अर्चना करनी चाहिए।

गुरुर्ब्रहमा गुरू र्विष्णुर्गुरूदैवो महेश्वरः।
गुरुदेवात्परं नास्ति तस्मातत्तं पूजयेत्सदा।।[4]

गुरु व गुरु के उपदेश के सम्बन्ध में कथन है कि जिसकी दृष्टि दृश्य के बिना ही स्थिर हो जाती है, बिना प्रयत्न के ही जिसकी वायु स्थित हो जाती है तथा बिना किसी अवलम्बन के ही चित्त भी स्थिर हो जाये वही योगी है और वही गुरु होने के योग्य भी है तथा ऐसे ही गुरु की शरण में जाना चाहिए और सेवा करनी चाहिए।

दृष्टि स्थिरा यस्य विनैव दृश्यं,
वायु स्थिरो यस्य बिना प्रयत्नम्।
चित्तं स्थिरं यस्य विनावलम्बं,
स एव योगी स गुरुः स सेव्यः।।[5]

जिस प्रकार सिद्ध (शोधे गये) पारे के स्पर्श से ताँबा स्वर्णमय हो जाता है। उसी प्रकार गुरु के उपदेश श्रवण करने से शिष्य भी तत्त्वमय हो जाता है।

यथा सिद्धरसस्पर्शात ताम्रं भवति कांञ्चनम्।
गुरुपदेशश्रवणाच्छिष्यस्तच्वमयस्तथा।।[6]

गुरु की सेवा में तल्लीन शिष्य तत्त्वज्ञान प्रकाशित होता है और यही कारण है कि श्रेष्ठ सिद्ध पुरूषों और योग के आचार्यों ने गुरु की करूणा के सुधारस सागर में अपने चित्त को निमग्न कर देने को ही श्रेयस्कर और साधना में सिद्धि का उपाय बतलाया है। सिद्धसिद्धान्तसंग्रह की मार्मिक उक्ति दृष्टव्य है–

यत्कारुण्यविलोकनादपिभवेच्चिद्विश्रमः पारदः।
तस्मिन् श्री करुणासुधारसनिधौचेतोऽस्तुमग्नं गुरौ।[7]

गुरु की महिमा असंदिग्ध है। गुरु की चरणकृपा गंगा में मनरूपी कमल का समर्पण निःसन्देह मोक्ष का विधायक है।

योगीराज गम्भीरनाथ जी ने योगरहस्य के नवमोपदेश में कथन किया है कि ''शास्त्र विदित है कि गुरु ईश्वर की अपेक्षा भी श्रेष्ठ होता है, शिष्य के लिए गुरु ही सर्वस्व है, गुरु के प्रति एक निष्ठा भक्ति होने से किसी अन्य प्रकार की आराधना की आवश्यकता नही रहती। गुरु शिष्य का ज्ञान दाता और मुक्तिदाता होता है। गुरु शिष्य का उपदेष्टा और सहाय्यकारी होता है, शिष्य को गुरुपदेश का अनुवर्तन करना चाहिए, यदि वह ऐसा नहीं करता है तो गुरु भी उसके लिए कुछ नहीं कर सकता क्योंकि मुक्ति (मोक्ष) घोलकर पिला देने की वस्तु नहीं है। यदि शिष्य जिज्ञासु है तो गुरु उसे उपदेश दे सकता है।[8]

शिव को नमस्कार करके योगिराज कहते है कि विषय के त्याग, तत्वों के दर्शन, सजह अवस्था, सदगुरु की करुणा के अभाव में दुर्लभ है। ज्ञान मुक्ति अस्तित्व सिद्धि ये सभी गुरु उपदेश से ही प्राप्त होते है, द्रष्टव्य है–

ऊँ नमः शिवाय गुरवे नादबिन्दुकलात्मने।
निरञ्जनपदं याति नित्यं यत्र परायणः।।
दुर्लभो विषयत्यागो दुर्लभं तत्त्वदर्शनम्।
दुर्लभा सहजावस्था सदगुरोः करूणां विना।।
ज्ञानं मुक्तिः स्थिति सिद्धिगुरुवाक्येन लभ्यते।।[9]

नाथ सम्प्रदाय में अवधूत को उच्चतम गुरु स्वीकार किया गया है। जो योगी आत्मानुभूति की उच्चतम स्थिति को प्राप्त कर लेता है। वह अवधूत कहलाता है। अवधूत से तात्पर्य उस व्यक्ति विशेष से है जो प्रकृति के समस्त विकारों का अतिक्रमण कर जाता है जो प्रकृति की शक्तियों और नियमों से परे है तथा जिसका व्यक्तित्व मलिनताओं, सीमाओं, परिवर्तनों तथा इस भौतिक जगत के दुःखो और बन्धनों के स्पर्श से परे होकर स्थित होता है। वह जाति धर्म लिंग सम्प्रदाय और राष्ट्र के भेदों से ऊपर उठ जाता है। वह किसी भी प्रकार के भय, चाह या बन्धन के बिना पूर्ण आनन्द और स्वच्छता की स्थिति में विचरण करता है। उसकी आत्मा का परमात्मा अथवा भगवान शिव, विश्व के सृष्टा शासक और हर्ता के साथ एकाकार हो जाता है।[10] अवधूत गुरु 36 लक्षणों से युक्त होता है व शिष्य बत्तीस लक्षणों से युक्त होता है। अर्थात शिष्य गुरु से चार लक्षण न्यून वाला होता है। शिष्य की यही न्यूनता उपयुक्त कही है क्योंकि अधिक लक्षणों से हीन शिष्य मोक्ष भोगी नहीं होता है।

अवधूत संम्प्रदास्येयं रीतिः षट्त्रिंशल्लक्षणसम्पन्नो।
गुरूद्वात्रिंशल्ललक्षणसम्पन्नः शिष्यस्ततश्चतुर्लक्षणन्यूनः।।[11]

शिष्य गुरु को शिव तुल्य मानकर उनकी सेवा व पूजा करते है। गुरु इच्छा मात्र से ही अपने शिष्य को महाशक्ति कुण्डलिनी को जाग्रत करने समर्थ्य होते है। शिष्य की साधना के प्रारम्भ से लेकर मोक्ष तक का मार्ग गुरु ही प्रशस्त करते है। सिद्ध दत्तात्रेय महायोगी गोरखनाथ, योगेश्वर

मत्स्येन्द्रनाथ जालन्धरनाथ आदि नाथसिद्ध अवधूत गुरु है, जिन्होनें अपने शिष्यों का और उन शिष्यों ने भी अपने शिष्यों का कल्याण मार्ग प्रशस्त किया। परमपद में स्वस्थ गुरु के अनुग्रह से शिष्य जन्म मरण दुख रूप अर्थात यातनामय संसार बन्धन से मुक्त हो जाता है।

ततः स मुच्यते शिष्यों जन्म संसारबन्धनात्।
परानन्दमयो भूत्वा निष्कलः शिवतां व्रजेत्।।[12]

गुरु उपदेश की महत्ता के विषय में कहा गया है कि सद्गुरु के मुख से उपदिष्ट उपदेश रूपी अमृत का पान करने से ही परमपद की प्राप्ति होती है। नहीं तो कोई भी साधक कितने ही शास्त्रों और वेदों का अध्ययन कर ले परन्तु फिर भी उसे परमपद की प्राप्ति संभव नहीं होगी। साधक तर्क शास्त्री हो अथवा व्याकरण शास्त्र का महारथी पर गुरु सेवा के बिना परमपद की प्राप्ति असंभव है। वेदान्तों को सुनकर पूर्ण ज्ञानी बन जाए और तत्त्वमसि का अभ्यास करके महान आत्मतत्त्वज्ञानी ही क्यों न बन गया हो, परन्तु वह केवल सोऽहं के सतत जप से अथवा केवल जीवात्मा और परमात्मा की समरसता की अनुभूति से गुरु के उपदेश बिना परमपद को प्राप्त नहीं कर सकता।

तज्ज्ञेयं सदगुरोर्वक्त्रात् नान्यथा शास्त्रकोटिभिः।
न तर्क शब्दविज्ञानान्नचाराद् वेदपाठनात्।।
वेदान्तश्रवणान्नैन तत्त्वमस्यांदि बोधनात्।
न हंसोच्चारणाज्जीवब्रह्मणोरैक्यभावनात्।।[13]

नाथ सम्प्रदाय में जिस समय सिद्ध गुरु द्वारा परमपद की प्राप्ति के उपायभूत योगमार्ग के उपदेश से परमात्मबोध कराया जाता है, तत्क्षण ही स्वसंवेद्य अलख निरंञजन परमेश्वर का साक्षात्कार हो जाता है। यह निर्विवाद है कि परमपद की प्राप्ति में गुरु की कृपा ही एकमात्र कारण है।

''यस्मिन् दर्शिते सति तत् क्षणात् स्वसंवैद्य,
साक्षात्कारः समुत्पद्यते ततो गुरूरेवात्र कारणमुच्यते।।[14]

व्यष्टि पिण्ड और परपिण्ड (परमात्मा) में एकीकरण की प्राप्ति गुरु के अनुग्रह से ही होती है। सिद्ध योगियों को इसके लिए सर्वप्रथम गुरु चरणों में शरणागत होकर उसी प्रसन्नता से चित्तवृत्तियों के निरोधपूर्वक स्वरूप ध्यान और समाधि से उपासना में अर्थात योग साधना में तत्पर होकर स्वपिण्ड से परपिण्ड पर्यन्त ऐक्य का अनुभव करना चाहिए। इस तरह की साधना से ही तत्क्षण परमपद द्वैताद्वैतविवर्जित परमात्म पद का अनुभव होता है।

''अतएव महासिद्धयोगिभिः सम्यग् गुरुप्रसादं लब्ध्वावधानबलेनैदयं भजमानैस्तत्क्षणात् परमं पदमेवानुभूयते।[15]

योग रहस्य में योगिराज गम्भीरनाथ ने वर्णन किया ''गुरु ईश्वर की अपेक्षा श्रेष्ठ है''[16] उनके इस उपदेशांश में अन्तर्निहित गम्भीर तात्त्विक रहस्य का शास्त्रदृष्टि से हृदयड.म् करना आवश्यक है। ''ईश्वर और गुरु स्वरूपतः अभिन्न है, तथापि ईश्वर की अपेक्षा गुरु श्रेष्ठ होता है अर्थात भगवान के ईश्वर भाव की अपेक्षा उनका गुरुभाव अधिकतर महीयान् होता है। कारण यह है कि उनकी ऐश्वरिक लीला के भीतर प्रेम, करुणा, सौन्दर्य माधुर्य आदि जीवचित्ताकर्षक उत्कृष्ट गुणों का विशेष परिचय नहीं प्राप्त होता, किन्तु उनकी गुरुशक्ति के भीतर इन सभी गुणों का समुज्जवल प्रकाश होता है। ईश्वर दयामय है या नही? इस प्रश्न के उत्तर में योगिराज का कथन है कि ईश्वर दयामय नहीं है। वह मात्र कर्मफल प्रदाता है। दयामय गुरु होता है। भगवान गुरु रूप में ही अहैतुक कृपा सिन्धु है, ईश्वर रूप में नहीं। गुरु रूप में वे सुख–दुख मोहमय संसार के स्रष्टा नहीं है, अपितु निरोधयिता है, कर्म फलदाता न होकर गुरु कर्मफल मुक्तिदाता है।[17]

गुरु अविद्यान्धी भूत संसार निमज्जित सुख दुख मोहजर्जरित जीव के चक्षु को ज्ञानाञ्जन शलाका द्वारा उन्मीलित करके उसके सुखदुःखमोहातीत सर्वबन्धनविवर्जित सच्चित्परमानन्दधन पारमार्थिक स्वरूप को प्रकाशित करते है एवं शिष्य को सब कर्म और कर्मफल से मुक्त कर देते है।[18]

योगवाशिष्ट में वर्णित है[19] कि ''जो गुरु दर्शन स्पर्श अथवा शब्द द्वारा शिष्य के प्रति कृपा प्रकाश पूर्वक उसके चित्त में शम्भु (शिवब्रह्म) सम्बन्धी सम्यक आवेश उत्पन्न कर देता है, वही यथार्थ उपदेश या गुरु है।''

दर्शनाद् स्पर्शनाद शद्वात् कृपया शिष्यदेहके।
जनमेद यः समावेशं शाम्भवं स हि देशिकः।।

इसका निर्देश करते है कि गुरू वाक्य से जो तत्त्वज्ञान उत्पन्न होता है, उसका कारण शिष्य की प्रज्ञा ही है अर्थात उत्तम शिष्य के चित्त में ही गुरु वाक्य का तत्पर्य प्रकाश सत्वर तथा समुज्जवल होता है। मध्यम शिष्य के चित्त में उसके प्रकाशित होने के लिये लम्बी साधना आवश्यक होती है एवं कनिष्ठ अर्थात मन्दप्रज्ञ और मन्द प्रयत्न शिष्य के चित्त में ज्ञान प्रकाशित होने के लिये जन्म जन्मान्तर आवश्यक हो सकते है।

''शिष्यप्रज्ञैव बोधस्य कारणं गुरूवाक्यतः।''

गोरखसंहिता के संग्रहकर्ता पृथ्वीराज ने उल्लेख किया है कि भगवान दत्तात्रेय को नाथ पन्थ में आदि गुरु माना जाता है, अवधूत दत्तात्रेय ने 24 गुरुओं को अपनाया था। क्रमशः 24 गुरु पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, कबूतर, अजगर, समुद्र, पतंगा, भ्रमर, हाथी, हरिण, मछली, शहद, एकत्र करने वाला, पिंगला (वैश्या), गिद्ध, बालक, कुमारी कन्या, बाण बनाने वाला, सर्प, मकड़ी, तितली है। अतः इससे ज्ञात होता है कि उन्होनें जिससे जो भी ज्ञान अर्जित किया उसे ''गुरु' की उपाधि प्रदान की। प्रकृति पशु–पक्षी, जीव–जन्तु सभी उनके लिए उपास्य थे। दत्तात्रेय जी ज्ञान

प्राप्ति के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे। इसी ''गुरुपद'' को स्थापित करने के लिए उन्होनें अलग–अलग 24 गुरु बनाए।[20]

नाथ परम्परा गुरु शिष्य परम्परा से ओतप्रोत है, गुरु सर्वोपरि है नाथ सम्प्रदाय की सम्पूर्ण साधना गुरु के मार्ग दर्शन में चलती है। गुरु विहीन साधना का विधान नाथ परम्परा में नहीं है, कहा गया है कि जिसे योग सम्बन्धी ज्ञान नहीं, जो शिष्यों को मिथ्या वाग्जाल में फांसता है, पथभ्रष्ट करता है। विडम्बना युक्त है वह गुरु नहीं है वह त्याज्य है जो स्वयं परमात्मनिष्ठा से अनभिज्ञ है वह दूसरों को किस प्रकार सदमार्ग पर ला सकता है।

ज्ञानहीनो गुरूस्त्याज्यो मिथ्यावादीविडम्वकः।
स्वविश्रान्ति न जानाति परेषां स करोति किम्।।[21]

अतः नाथ सम्प्रदाय में गुरु का स्थान ईश्वर से श्रेष्ठ स्वीकार किया जाता है, अर्थात गुरु को ईश्वर सदृश्य मानकर पूजते है जो प्रत्यक्षतः मार्गदर्शक होता है। शिष्य जब तत्त्वदृष्टि से गुरु को अपने अन्तर में उपलब्ध करता है। साधना द्वारा जब जीव स्वयं को गुरूमय कर लेने में समर्थ होता है, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जब गुरु की करूणामयी लीला के प्रकाश का दर्शन करने लगता है, तब गुरु और शिष्य दो नहीं रह जाते, उस समय शिष्य के लिये गुरु ही सर्वेसर्वा होता है। गुरु ही नित्य सिद्ध और नित्य साधक भी है, गुरु ही ज्ञान प्रेम स्वरुप है, ज्ञान प्रेम प्रकाशक है और ज्ञान प्रेम पिपासु है। तभी शिष्य के पुरूषकार का चरम विकास है, गुरु की कृपा शक्ति की पूर्ण अभिव्यक्ति है। उस सहजानन्दरूपी गुरू को नमस्कार है, जिनका वाक्य रूपी अमृत संसार रुपी मोह व्याधि का विनाश करता है।

नमोऽस्तु गुरुवे तुभ्यं सहजानन्दरुपिणे।
यस्य वाक्यामृतं हन्ति संसारमोहनामयम्।।[22]

सन्दर्भ सूची :–

1. योगबीज पृ0–137
2. सिद्धसिद्धान्त पद्धती– 3/71
3. गोरक्षशतक – श्लो0 1
4. अमनस्क योग – उत्तरार्ध श्लो0 44
5. अमनस्क योग – पूर्वार्ध श्लो0 14
6. अमनस्क योग उत्तरार्ध श्लो0 48
7. सिद्धसिद्धान्त संग्रह 5/36
8. योग रहस्य – पृ0 146
9. योगरहस्य पृ0 146
10. नाथ योग पृ0 –9
11. गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह पृ0 133
12. सिद्ध सिद्धान्त पद्धति 5/78
13. वहीं – 5/31, 32
14. वहीं 5/6
15. वहीं 5/9
16. योग रहस्य पृ0– 147
17. योग रहस्य पृ0 150, 151
18. योग रहस्य (विस्तार के लिये नवम उपदेश)
19. योग रहस्य पृ0 175 (उधृत अंश योगवाशिष्ट)
20. गोरख संहिता (विस्तार हेतु पृ0 210 – 217)
21. सिद्धसिद्धान्त पद्धति – 3/73
22. अमनस्क योग – 2/20